

राम के मार्ग पर चलूँ या कृष्ण के

सञ्जय मोहन मित्तल

बच्चे माता पिता के आचरण से सीखते हैं और एक पीढ़ी का पाखण्ड अगली पीढ़ी के लिए परम्परा बन जाता है। और हम तो सौ से अधिक पीढ़ियों की रूढ़ियों को ढो रहे हैं। अपने गौरवपूर्ण इतिहास के महानुभावों की पूजा करना हमारा कर्तव्य है। परन्तु पूजा उनकी मूर्तियों को सजा कर आरती उतार कर की जाए या फिर उनके द्वारा निर्देशित आदर्शों को अपने जीवन में उतारकर? एक गुरु के दो शिष्य हैं। एक जो गुरु की सेवा में तत्पर रहता है, प्रतिदिन उनके पाँव दबाता है, परन्तु उनके दिए ज्ञान को नहीं समझता। और दूसरा जो हर क्षण गुरु से ज्ञान प्राप्ति के लिए लालायित रहता है; उनसे न सिर्फ ज्ञान प्राप्त करता है परन्तु उसको समझकर अपना जीवन भी उसी प्रकार यापन करता है। इनमें से गुरु का प्रिय शिष्य दूसरा ही है जो गुरु के ज्ञान की परम्परा को आगे बढ़ाता है।

हिन्दुओं के सामने भी आदर्श स्वरूप दो चरित्र हैं, रामायण के श्री राम और महाभारत के श्री कृष्ण। इनकी पूजा प्रायः सभी हिन्दू करते हैं, परन्तु बहुत कम ही इनके आदर्शों का अपने जीवन में पालन करते हैं, बल्कि ज्यादातर तो इन आदर्शों के विपरीत ही व्यवहार करते हैं। सम्भवतः इसलिए कि रामायण और महाभारत के सन्देश में एक विरोधाभास सा प्रतीत होता है। मैं श्री राम को अपना आदर्श मानूँ या श्री कृष्ण को, यही मन में सबसे बड़ी दुविधा है। और शायद इसी दुविधा में हम उनके आदर्शों को गोली मार केवल उनकी मूर्तियों की सजावट में ही लगे रहते हैं।

रामायण को देखे तो भाई भाई के लिए त्याग कर रहा है। राम ने हँसते हँसते राजपाट भरत के लिए छोड़ दिया और भरत भी वह राजपाट राम से लेने को तैयार नहीं। भातृ प्रेम का इससे अच्छा उदाहरण नहीं मिलता। दूसरी ओर महाभारत में भाई भाई राज्य के लिए लड़ रहे हैं। और जब अर्जुन रण में अपने भाईयों को देख विचलित होकर शस्त्र त्याग कर देता है तो श्री कृष्ण गीता के प्रसिद्ध उपदेश में उसे अपने भाईयों को मारने के लिए हथियार उठाने के लिए प्रेरित करते हैं। विचित्र दुविधा है ! मैं किसको ठीक मानूँ?

परन्तु यदि हम ध्यान से देखें तो दोनों के आदर्शों में कोई अन्तर है ही नहीं। दोनों ही स्वार्थ से उपर उठकर, परमार्थ में निष्काम कर्म करने के उपदेश दे रहे हैं। क्षत्रिय का परम कर्तव्य है प्रजा की सुरक्षा व उसका पालन। श्री राम ने देखा की भरत धर्मात्मा भी हैं और विद्वान भी। वह प्रजा का पालन बहुत कुशलता से करने में सक्षम हैं। इसी कारण श्री राम को भरत को राजा बनाने में कोई आपत्ति नहीं हुई। यही भाव भरत के हृदय में भी है। वह मानते हैं कि श्री राम प्रजा का पालन और भी अच्छा करेंगे और इसीलिए वह श्री राम को ही राजा बनाने के लिए उत्सुक हैं।

दूसरी ओर महाभारत का दुर्योधन दुष्ट प्रवृत्ति का है, अहंकारी है; और अपने अहंकार के वश अपनी भाभी द्रौपदी के चीरहरण से भी बाज नहीं आता। ऐसे दुष्ट के राज्य में प्रजा कष्ट ही सहेगी। इसीलिए श्री कृष्ण ने अर्जुन को सब आततायियों को मारने का उपदेश दिया और उनको भी जो आततायियों का साथ दे रहे थे।

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः । तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर ॥ श्रीमद् भगवद्गीता ३:९

गीता के तीसरे अध्याय के इस श्लोक से स्पष्ट है की हमें अपने सब कर्म यज्ञ की भावना से ही करने चाहिए। जैसे ही हम स्वार्थ से ऊपर उठ परमार्थ में कर्म करते हैं तो हमारे सभी कर्म ही भगवान की पूजा बन जाते हैं। श्री राम और श्री कृष्ण के सन्देश का भेद मिट जाता है और दुविधा समाप्त हो जाती है। जब उनमें कोई भेद है ही नहीं तो दोनों के ही आदर्शों को हम एक साथ मान सकते हैं।